International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 26-04-2020; Accepted: 19-05-2020; Published: 29-05-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 3; 2020; Page No. 14-15

दुश्यंत कुमार का आक्रोशित काव्य रूप

Madhubala [1], Tabassum Khan [2]
[1] Scholar, Hindi, SSSUTMS University Sehore, Madhya Pradesh, India
[2] Head of The Department, Hindi, SSSUTMS University Sehore, Madhya Pradesh, India

प्रस्तावना

हिन्दी गजलों के मसीहा स्वर्गीय दुश्यन्त कुमार त्यागी जी स्वातंत्रयोतर हिन्दी साहित्य के एक सषक्त साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। यथार्थ तथा मानवतावाद इनके सम्पूर्ण साहित्य में मूल कथ्य के रूप में दृश्टिगोचर होता है। हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अपनी कलम चलाने वाला यह साहित्यकार एक अर्थ में दर्द का लेखक व कवि रहा है जिसका दर्द आम–आदमी का दर्द है। इस दर्द को उन्होंनें स्वंय भी अपने मानसिक धरातल पर भोगा था। अतः उन्होंनें जो स्वयं भोगा और अनुभव किया, उसे अपने साहित्य के माध्यम से व्यक्त किया।

दुश्यंत कुमार की काव्य षैली आक्रमक रही हैं। साहित्य,समाज, राजनीति अथवा धार्मिक प्रत्येक स्तर पर फैली घुटन, आषंकाओं, कुंठा तथा अवसरवादिता का चित्रण अपने साहित्य में करते हुए दुश्यंत जी ने अपने आक्रोश को जन–जन तक पहुँचाया। दुश्यंत कुमार के काव्य में उनका आक्रोशित रूप देखने से पूर्व ' आक्रोश ' षब्द के अर्थ को जानना आवष्यक है। आक्रोश का अर्थ है– कोसना, षाप देना, भला–बुरा कहना आदि। [1] आक्रोश के पर्यायवाची के रूप में क्रोध, रोश, कोप, अमर्श,गुस्सा' को लिया जा सकता है। [2] आक्रोश मन की आवेगात्मक स्थिति है जो हिंसा, प्रतिक्रिया आदि के रूप में मुखरित होती है। तत्कालीन परिवेष की प्रतिक्रिया के रूप में दुश्यंत कुमार के साहित्य में आक्रोश विद्यमान है। वे बचपन से ही स्वाभिमानी स्वभाव प्रवृत्ति के धनी रहे हैं। अपने स्वाभिमान को उन्होने विकट परिस्थितियों में भी बनाए रखा है। उनकी पीड़ा आम आदमी की पीड़ा है।

उनकी कविताएँ व विषेशकर गजलें आम जन–मानस के निकट रही हैं। इनमें वैयक्तिकता न होकर सामाजिकता का भाव विद्यमान है। इनमें कवि ने आम आदमी की पीड़ा के स्वर को उठाया है। ये कविताएं व गजलें व्यक्ति की कुंठा स्वार्थपरता, दयनीय परिस्थितियों में, अभावों में जीवन यापन की स्थिति, अषिक्षा, बेरोजगारी, भूखमरी, गरीबी, कुपोशण, दमघोटू सामाजिक मान्यताओं आदि का यथार्थ चित्रण करती हुई इन पर कटाक्ष करती हैं।

आम आदमी की इस दुर्दषा पर दुश्यंत कुमार का ह्रदय चित्कार उठता है। उनका सम्बन्ध किसी भी राजनीतिक दल से नहीं था। परन्तु वे तत्कालीन राजनीतिक गतिविधियों तथा राजनीतिक गलियारों से अनभिज्ञ नहीं थे। रेडियो में काम करने के दौरान वे बहुत से राजनेताओं तथा सरकारी अधिकारियों से मिलते रहते थे। कई बार उन्होंने इन सभी के साक्षात्कार भी लिए। अतः वे उनके दोहरे व्यक्तित्व से अच्छी तरह से परिचित हो गए थे। उनका कहना है कि चुनाव के समय नेता जनता से तरह–तरह के वादे करते है। चुनावी वादों में वे जनता के अभाव व फैली अव्यवस्था को दूर करने के लिए लोगों के मन में नई उम्मीदें जगाते हैं। परन्तु सत्ता में आने पर वे जनता को भूल जाते हैं। परिणामस्वरूप लोगों की स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती है। इस बात पर कटाक्ष करते हुए दुश्यन्त जी कहते हैं–

''कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के
कहाँ चिराग मयस्र नहीं शहर के लिए।''

समाज की आधारभूत इकाई परिवार है तथा परिवार की मानव। मनुश्य के मनुश्य से संबधों से ही परिवार व समाज बनता है। आज के समय में मानव के आपसी सम्बन्धों में प्रेम और विष्वास का स्थान स्वार्थ और कुंठा ने ले लिया है जिसके कारण सारे सम्बन्ध जर्जर हो गए हैं। अपसुख और संचय की प्रवृति मनुश्य पर इस कदर हावी हो गया है कि उसके अन्तर्मन में कुठां ने घर कर लिया है। सत्य, त्याग, प्रेम, न्याय, परोपकार जैसे षब्द तो यथार्थ के धरातल से गायब हो चुकें हैं। आज का व्यक्ति अपने आप में इतना अधिक सिमट कर रह गया है कि किसी और की पीड़ा उसे नजर ही नहीं आती। नई संस्कृतियों के मेल से विचारों के संघटन तथा विघटन का दौर चल पड़ा है। विचारों का विघटन पारिवारिक विघटन के परिणाम के रूप में सामने आने लगा है। व्यक्ति अपने स्वार्थ में अंधा होकर अहं की भावना से भर गया है। अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति की राह में उसे पारिवारिक हस्तक्षेप बाधा लगने लगा। अपनी जिम्मेवारियों व कर्त्तव्यों से मुंह मोड़कर व्यक्ति एकल परिवार की ओर रुख करने लगा। एकल परिवार की ओर रूख करने की मानसिकता पर आक्रोश प्रकट करते हुए दुश्यंत कुमार जी व्यंग्यात्मक षैली में लिखते हैं–

''ऊपर उठने का हो इरादा अगर पक्का
तो दो माँ–बापों को कुएँ में धक्का
उगने वाली इस तहजीब के करिश्मे
जग देखे होकर इकदम हक्का–बक्का।''

दबी हुई व भरी हुई इच्छाओं के परिणामस्वरूप व्यक्ति में भोगवादी तथा निराषावादी प्रवृत्ति का जन्म होता है। परंतु दुश्यंत जी इस भोगवाद व निराषावाद का खण्डन करते हुए व्यक्ति को धैर्य से काम लेने की सलाह देते हैं। समाज में व्यक्ति की दयनीय स्थिति विवषता तथा अभावों ने उसके जीवन को ऐसे मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है, जहाँ दुश्यंत कुमार की गजलों में वह अपने पेट को कमीज के अभाव में से ढक रहा है।

''ना हो कमीज तो पाँवों से पेट ढक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब हैं, इस सफर के लिए''।

समाज में आर्थिक विशमता की भी गहरी खाई बनी हुई है। अमीर और अधिक अमीर तथा गरीब और अधिक गरीब होता जा रही है। अत्यंत गरीबी के कारण समाज का एक वर्ग फुटपाथ पर सोता है तथा भूखमरी से जूझ रहा है। बेरोजगारी, भूखमरी, अभाव, आर्थिक विशमता आदि ने भ्रश्टाचार की समस्या को भी बढ़ावा दिया है। धर्म भी इस क्षेत्र में पीछे नहीं रहा है। धार्मिक

कट्टरता, अवसरवादी विचारधारा, ढोंग व आडम्बर समस्त समाज को नुकासन पहुँचा रहे हैं। धर्म की आड़ में अपनी स्वार्थ सिद्धि करने वालों पर क्षोभ प्रकट करते हुए दुश्यंत जी लिखते हैं–

''गजब है सच को सच कहते नहीं, वा कुरानो–उपनिषद खोले हुए हैं।
मजारों से दुआएँ मांगते हो, अकीदे किस कदर पोले हुए हैं।''

दुश्यन्त कुमार जी ने तमाम विसंगतियों का प्रतिकार करने के लिए आक्रोष का सहारा लिया है। तीक्ष्ण प्रहार व व्यग्यपूर्ण वाणी की वजह से वे विसंगतियों को उजागर करने में पूरी तरह से सक्षम हैं। अपने रोश को प्रकट करने के लिए उन्होंने मिथकों का सहारा लिया है। अपने समय के ज्वलन्त मुद्दों को उठाने के लिए प्रतीकों का भी सुन्दर प्रयोग किया हैं।

'' ये सारा जिस्म झुक्कर बोझ से दुहरा हुआ होगा,
मैं सजदे में नहीं था, आपको धोखा हुआ होगा।
यहाँ तो सिर्फ गूँगे और बहरे लोग बसते हैं,
खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा।''

दुश्यन्त जी की हिन्दी साहित्य के अपूर्व देन हैं एक सषक्त, निश्ठावान, व्यक्तिवान तथा मानवतावादी साहित्यकार के रूप में वे षोशण, अन्याय, व्याभिचार, पाखण्डों विसंगतियों तथा विद्रपताओं को समाप्त कर नवीन मूल्यों की स्थापना को प्रगतिषील रहे हैं जिसका माध्यम उन्होंने अपनी आक्रोषपूर्ण वाणी को बनाया है।

संदर्भ सूची

1 रामाचन्द्र वर्मा, संक्षिप्त हिंदी सागर, पृ सं–80
2 संजीव कुमार, सामान्य हिंदी, पृ सं–79
3 विजयबहादुर सिंह, दुश्यंत कुमार रचनावली भाग–1
4 विजयबहादुर सिंह, दुश्यंत कुमार रचनावली भाग–2